Research Guru
Online Journal of Multidisciplinary Subjects (ISSN : 2349-266X)
UGC Approved Journal No. 63726
Impact Factor:3.021 website: www.researchguru.net
Volume-11,Issue-3,December-2017

शिक्षा का अधिकार अधिनियम क्रियान्वयन में समस्याएँ

ब्रम्हा नन्द मिश्र

सहायक प्रोफेसर, दूर शिक्षा निदेशालय, महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

ई मेल- bnmishrabhu@gmail.com

स्वतन्त्रता के बाद गणतंत्र के प्रारंभ से ही सभी के लिए समान अवसरों के प्रावधान के माध्यम से सामाज के सुदृढ़ीकरण हेतु सार्वभौमिक शिक्षा की भूमिका को स्वीकार किया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति तैयार किए जाने के साथ ही भारत ने कई योजनागत एवं कार्यक्रम के माध्यम से शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए व्यापक कार्यक्रम प्रारंभ किए गए है। शिक्षा के सार्वभौमिकरण हेतु सर्व शिक्षा के अधिकार का कार्यान्वयन भारत के मुख्य कार्यक्रम के तौर पर किया जा रहा है। इसके समग्र लक्ष्यों में शामिल है- सार्वभौमिक सुलभता एवं प्रतिधारण, शिक्षा के सार्वभौमिकरण में सामाजिक श्रेणी एवं बालक-बालिका के अंतरों को समाप्त करना तथा बच्चों के अधिगम स्तरों में बढ़ोत्तरी। शिक्षा में विविध प्रकार के कार्यों का प्रावधान किया गया है जिनमें अन्य कार्यों के साथ-साथ नए स्कूलों का निर्माण, अतिरिक्त अध्यापक, नियमित अध्यापक, सेवाकालीन प्रशिक्षण, निःशुल्क पाठ्य-पुस्तकें अकादमिक संसाधन सहायता एवं अधिगम परिणामों में सुधार करने के लिए निःशुल्क सहायता प्रदान किया जाना शामिल है। संविधान के छियासीवें संशोधन के अंतर्गत मौलिक अधिकार के रूप में छः से चौदह वर्ष के आयु समूह में सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान किया गया है। निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा आरटीई अधिनियम 2009 में बच्चों का अधिकार, जो अनुच्छेद 21क के तहत परिणामी विधान का प्रतिनिधित्व करता है, का अर्थ है कि औपचारिक स्कूल, जो कतिपय अनिवार्य मानदण्डों और मानकों को पूरा करता है, इसमें संतोषजनक और एकसमान गुणवत्ता वाली पूर्णकालिक प्रारंभिक शिक्षा के लिए प्रत्येक बच्चे को अधिकार प्राप्त है।

भूमिका - निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा अधिकार अधिनियम न्यायोचित कानूनी ढांचे का प्रावधान करता है जो 6 से 14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य प्रवेश, उपस्थिति और शिक्षा को पूरा करने का अधिकार देता है। यह अधिनियम बच्चों के साम्यता और बिना भेद भाव के अधिकार प्रदान करता है। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह है कि बच्चों को ऐसे शिक्षा का अधिकार देता है जो भय,दबाव और

चिंता से मुक्त है। विद्यालयों में सीखने का वातावरण बनाने और बच्चों को प्रेरित करने में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है,अगर सरल शब्दों में कहें तो स्कूल एक ऐसी जगह है जहाँ छात्र-शिक्षक आपस में विभिन्न शैक्षणिक सामग्री का उपयोग करके संवाद और बातचीत के माध्यम से सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में शामिल होते हैं। अध्यापक अपने अनुभवों को समृद्ध करता है, बच्चे पुराने अनुभवों के जमीन पर नए अनुभवों को जोड़ते हुये ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया से अवगत होते हैं। यहाँ वे पढ़ना- लिखना, खुद को अभिव्यक्त करना, अन्य बच्चों के साथ समायोजन करना, खेल और अन्य सामूहिक होने वाले कौशलों का विकास करते हैं।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम 1 अप्रैल 2010 को लागू हुआ। इस अधिनियम को लागू होने में अनेकों प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ा। लागू हो जाने से ऐसा प्रतीत हुआ कि अब बच्चों को उनका अधिकार प्राप्त हो जाएगा और हमारा देश शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी देशों में सम्मिलित हो जायेगा लेकिन ऐसा नहीं हो सका। शिक्षा का अधिकार के लागू हुए 7 वर्ष से अधिक हो गए लेकिन आज भी विभिन्न प्रकार की समस्याएँ प्रतिदिन आ रहीं हैं। 2011की जनगणना के अनुसार आज भी भारत देश में ऐसे बच्चों की संख्या 78 लाख से अधिक है जो स्कूल तो जाना चाहते हैं लेकिन किसी न किसी प्रकार की पारिवारिक समस्या के कारण स्कूल नहीं जा पाते हैं। यद्यपि काम करने वाले बच्चों की संख्या स्कूल जाने वाले बच्चों के पूरी आबादी की तुलना में अत्यधिक कम है मगर यह संख्या काफी बड़ी है। जो यह दर्शाती है कि परिवार और बच्चों द्वारा शिक्षा को कितना कम महत्व दिया जा रहा है।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम के क्रियान्वयन में अनेकों प्रकार की समस्याएँ आ रही हैं। कुछ समस्याएँ निम्नलिखित हैं -

समय एवं धन का अपव्यय - सरकारी स्कूलों में भी निजी विद्यालयों के समान प्रारम्भ में सम्पूर्ण ध्यान नामांकन पर होता है। मगर सरकारी विद्यालयों में प्रवेश लेने वाले बच्चे निजी विद्यालयों की तरह नियमित नहीं आते। वे विद्यालय छोड़ कर लंबी अवधि के लिए रोजगार, परिवार की जरूरत और अन्य कारणों से अपने मूल स्थान से पलायन भी कर जाते हैं। ऐसे में उनका विद्यालय जाना संभव नहीं हो पाता। यही कारण है कि भारत के बहुत से सरकारी स्कूलों में पर्याप्त नामांकन होने के बावजूद लगभग 40-–50 फीसदी बच्चे ही नियमित स्कूल आ पाते हैं। शेष बच्चे नामांकन के बाद अन्य कार्यों में व्यस्त रहते हैं और किसी तरह से अपनी पढ़ाई पूरी करते हैं या पढ़ाई बीच में ही छोड़ देते हैं। कई राज्यों में नामांकन का लक्ष्य प्राप्त करने के बाद भी अवरोधन संबंधी चुनौतियाँ बनी हुई हैं, इसका असर बच्चों के अधिगम स्तर पर भी दिखाई देता है।

प्राथमिक स्तर पर ध्यान में कमी - भारत में प्राथमिक स्तर की शिक्षा को बेहतर बनाने में दो सबसे बड़ी समस्याएं हैं पहली पूर्व प्राथमिक शिक्षा की उपेक्षा और दूसरी प्राथमिक शिक्षा में पहली दूसरी कक्षा की

उपेक्षा। आमतौर पर सरकारी विद्यालयों में बड़ी कक्षाओं के ऊपर विशेष ध्यान दिया जाता है छोटी कक्षाओं की उपेक्षा होती है। इसके पीछे तर्क भी दिया जाता है कि आठवीं कक्षा के विद्यार्थी तो इस साल पास होकर चले जाएंगे। उनके लिए हमारे पास अगला साल नहीं होगा मगर पहली दूसरी के बच्चों को तो बाद में भी समय देकर सिखाया जा सकता है। इस सोच के कारण बहुत से स्कूलों में हर साल पहली-दूसरी कक्षा की उपेक्षा होती है। इसका असर बच्चों के अधिगम स्तर पर पड़ता है।

वास्तविकता से परे - शिक्षा क्षेत्र में काम करने वाले प्राथमिक शिक्षा की वास्तविक समस्याओं के समाधान की दिशा में खास प्रयास नहीं कर पा रहें हैं। भारत में शिक्षा का अधिकार कानून के तहत 6-14 वर्ष तक की उम्र के बच्चों को अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा का प्रावधान किया गया है। इस लक्ष्य को पूर्ण करने हेतु शिक्षक अपनी तरफ से कोशिश कर रहें हैं। कक्षा में पढ़ा रहें हैं, बच्चों का नियमित आकलन कर रहें हैं, शिक्षा प्रक्रिया को बेहतर करने की कोशिश कर रहें हैं। पहली जुलाई को किसी कक्षा विशेष की जो स्थिति थी ,वह स्थिति 15 अगस्त को नहीं होती। शिक्षक दिवस के दिन शिक्षक आपस में स्कूल के जिन मुद्दों पर बात करते है ,वह बाल दिवस आते-आते पूरी तरह बदल जाती हैं तथा सत्र के अंत तक कागजी कार्यवाही अवश्य पूर्ण कर लेते हैं।

शिक्षकों से संबन्धित समस्याएँ -

योग्य शिक्षकों की कामीं - भारत में एकल स्कूलों की स्थिति बताती है कि प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षकों की कमी है। नई नियुक्ति के लिए सरकार तैयार नहीं है, पद खाली पड़े हैं। 12वीं पास लोगों को पढ़ने की ज़िम्मेदारी दी जा रही है इससे स्थिति में परिवर्तन नहीं हो रहा है। इसीलिए शिक्षा के क्षेत्र में सुधार की दीर्घकालीन नीति में सरकारी प्रयासों को गति देने की जरूरत है। इसके आभाव में अनेकों नीतियाँ और कार्यक्रम आधे-अधूरे उद्देश्यों को प्राप्त करेंगे। प्राथमिक स्तर पर प्रशिक्षित शिक्षकों की नियुक्ति से सरकार पीछे हटती रही है, लेकिन अब प्रशिक्षित शिक्षकों के नियुक्ति की उपयोगिता स्वीकार ली गयी है। अब बात पर्याप्त संख्या में शिक्षकों की नियुक्ति और उनके बेहतर प्रशिक्षण की होनी चाहिए ताकि देश के नौनिहालों को बेहतर शिक्षा का अवसर मुहैया कराया जा सके।

अप्रशिक्षित शिक्षक - शिक्षक को शिक्षण प्रक्रिया का प्रमुख बिन्दु मानते हुए शिक्षक को विभिन्न दशाओं में उन्नत बनाने के लिए प्रयास करने चाहिए। शिक्षा जगत से जुड़े "शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम" में भी गुणात्मक सुधार लाने की आवश्यकता है। सरकार व समाज को ऐसी परिस्थितियां निर्मित करनी चाहिए जिससे आध्यापकों को निर्माण एवं सृजन की ओर बढ़ने की प्रेरणा मिले।

समर्पण की कामीं - शिक्षक शिक्षा के व्यवसाय में एक उच्च आदर्शों के साथ प्रवेश करता है। वह सादा जीवन उच्च विचारों को ध्यान में रखकर समाज सेवा में लग जाता है। किन्तु कई बार विषम परिस्थितियों

में वह पूर्णतः ईमानदारी नहीं रख पाता है। उसे कभी-कभी अपने व्यवसाय के प्रति अरुचि होने लगती है। जिससे उसके व्यवसाय के साथ न्याय नहीं हो पाता है।

शैक्षिक मूल्यों का पतन - शिक्षा के व्यवसाय में मानव व्यक्तित्व के प्रति समान भाव रखना आवश्यक है। इसमें आचरण नियंत्रण के लिए कुछ नैतिकता होनी आवश्यक है। जिसमें मानव अधिकारों के प्रति आस्था, अपने कार्य के प्रति ईमानदारी, विद्यालय व छात्रों के प्रति कर्तव्य परायणता व सामाजिक मूल्यों की वृद्धि करने की इच्छा होनी चाहिये।

व्यवसायिक असंतुष्टि - संतुष्टि एक सर्वव्यापक शब्द जिसका अर्थ विवादास्पद है। भारतीय दर्शनिकों के अनुसार परित्याग ही संतोष है। परंतु यह चरम स्थिति सामान्य जन को प्राप्त नहीं है। इस स्थिति को प्राप्त करने के लिए चिंतन, मनन एवं त्याग के भावना की आवश्यकता होती है। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से हम संतुष्टि का आवश्यकताओं के संबंध में अध्ययन करते हैं। वर्तमान में समान्यतया शिक्षक अपने व्यवसाय के प्रति असंतुष्ट दृष्टिगत होते हैं। यद्यपि यह समस्या परिस्थितिजन्य है। आज के समय में मनुष्य की आवश्यकताएँ बढ़ती ही जा रहीं हैं। ऐसे में इस व्यवसाय से असंतुष्ट रहना स्वाभाविक ही है।

अतिरिक्त कार्यों का दबाव -

- कठिन व्यवसाय
- धन की कमी
- उचित वेतन न मिलना
- छात्रों की उपस्थिति में कमी
- छात्रों में अनुशासन की कमी
- पाठ्यक्रम में निरंतर परिवर्तन

शिक्षकों के अधिकार हेतु सुझाव-

प्रशिक्षित शिक्षकों की नियुक्ति - शिक्षा की गुणवत्ता केवल तभी बेहतर हो सकती है, जब शिक्षक अच्छे, योग्य और रचनात्मक हों। शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए शिक्षकों की क्षमताओं का विकास करना आवश्यक है। अध्ययन के दौरान मिले साक्ष्यों से यह बात स्पष्ट हुई है कि शिक्षकों को सहयोग मिलने से शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार होता है। उनको सहयोग न मिलने की स्थिति में शिक्षा की गुणवत्ता में गिरावट होती है और युवाओं में निरक्षरता अप्रत्याशित रूप से बढ़ जाती है। सार्वजनिक प्राथमिक शिक्षा का लक्ष्य हासिल करने के लिए सरकार को शिक्षकों के रिक्त पदों को भरने में तेजी लानी चाहिये। अच्छे शिक्षकों की उपलब्धता सुनिश्चित करने और बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा दिलाने के लिए योग्य व प्रशिक्षित शिक्षकों की नियुक्ति करना चाहिये।

योग्य शिक्षकों का चयन -

- शिक्षकों को शुरुआती कक्षाओं से कमजोर बच्चों की सहायता करने के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिये।
- देश के अधिक चुनौती वाले हिस्सों में सबसे अच्छे अध्यापकों की नियुक्ति की जानी चाहिये ताकि असमानता को कम किया जा सके।
- सरकार को शिक्षक व्यवसाय हेतु प्रोत्साहन देना चाहिये जिससे किसी भी परिस्थिति में यह सुनिश्चित किया जा सके कि सारे बच्चों को अच्छी शिक्षा मिल सके।

शिक्षण विधियों में सुधार एवं आवश्यक परिवर्तन - अगर हम बच्चों के साथ आत्मीय संवाद नहीं करते, उनसे खुद सवाल नहीं पूछते कि वे क्या कर रहें हैं, क्या सोंच रहें हैं, किसी काम में उनको सबसे अच्छा क्या लगता है, तो हम शायद मानवीय संवाद के मशीनीकरण को प्रोत्साहित करने का एक माध्यम बन रहें हैं। बेहद अर्थ पूर्ण काम को मशीनीकृत ढंग से करके उसके अर्थ को समाप्त कर रहे हैं। ऐसी स्थिति किताब के पन्ने टटोलते उन बच्चों के जैसी है जिनको पढ़ना नहीं आता। लेकिन वे सारे दिन किताबों के साथ बैठे रहते हैं। अपनी बोरियत दूर करने के लिए किताब से अपनी कॉपी में कुछ-कुछ उतारते हैं और फिर छुट्टी होने पर घर लौटकर पसंदीदा खेलों और अन्य कामों में व्यस्त हो जाते हैं और स्कूल के दिन बस्ते की तरह खुटी पर टांग देते हैं।

प्रारम्भिक व प्राथमिक शिक्षा प्रक्रिया में परिवर्तन एवं सुधार - इस स्थिति में बदलाव के लिए बच्चों के ऊपर पहली कक्षा से ही ध्यान देने की जरूरत है। ताकि बच्चों को शुरुआती वर्षों में ही पढ़ना लिखना सिखाया जा सके और उनका स्कूल से जुड़ाव बना रहे। अगर कोई बच्चा शुरुआती वर्षों में पढ़ना लिखना सीख ले तो उसके नियमित स्कूल आने की संभावना बढ़ जाती है। मगर यह सारी बातें तभी संभव है जब स्कूल में पर्याप्त शिक्षक हों और पहली दूसरी कक्षा के बच्चों को पढ़ाना जरूरी माना जाता हो। नवंबर की परीक्षा या आकलन के बाद पूरे स्कूल की वास्तविक स्थिति सामने होती है। इसके बाद फिर नए सिरे से रणनीति तैयार होती है कि स्कूल को आगे कैसे ले जाना है, कौन सी कक्षा के बच्चे कहाँ पीछे रह रहे हैं, उनको कैसे आगे बढ़ाया जा सकता है। योजनाओं में बदलाव की जरूरत है।

निष्कर्ष - नये दौर में समाज के संपन्न और प्रभावशाली तबकों ने इससे किनारा कर लिया है इसलिए स्थिति सुधारने को लेकर व्यवस्था में कोई गंभीरता नजर नहीं आती और अधिकारियों के ऊपर भी कोई दबाव नहीं है। सरकारी स्कूलों में काम करने वाले बहुत से शिक्षकों में स्व-प्रेरणा का स्तर काफी नीचे है। इस जड़ता को तोड़ने के लिए शिक्षा प्रक्रिया में एक बड़े बदलाव की आवश्यकता है, मगर उच्च न्यायालय के फैसले के बावजूद स्थिति जस की तस बनी हुई है। सारे अधिकारियों के बच्चे निजी स्कूलों में पढ़ रहे हैं। सरकारी स्कूल अपनी पुरानी स्थिति में जैसे-तैसे सत्रारम्भ के बाद सत्रावसान की तरफ आगे बढ़ जाते हैं।

उत्तम शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए शिक्षाविद्, शैक्षिक प्रशासन से जुड़े अधिकारी, शिक्षक और शिक्षक प्रशिक्षक अपने-अपने स्तर पर काम कर रहे हैं, बच्चों का मूल्यांकन करने पर जोर दिया जा रहा है ताकि बच्चों के शैक्षिक प्रदर्शन में होने वाले बदलाव की सैद्धांतिक व्याख्या हो सके, बदलाव को आँकड़ों में प्रस्तुत किया जा सके लेकिन शिक्षा के क्षेत्र में बदलाव की कोई भी योजना अल्पकाल में शैक्षिक स्तर बढ़ाने जैसे लक्ष्य को हासिल करने के लिए सही रणनीति, बेहतर समझ और ज़्यादा समन्वय के साथ काम करने की आवश्यकता को महत्व देती है, आज बच्चों में सीखने की समस्याओं के समाधान में उठाये जा सकने वाले संभावित क़दमों की व्याख्या की जा रही है।

सन्दर्भ -

- अग्रवाल,जे.सी.(2010),(प्रथम संस्करण), “भारत में शैक्षिक प्रणाली का विकास” आर. एस. ए. इन्टरनेशनल प्रकाशन, आगरा।
- अग्निहोत्री,रवीन्द्र(2008),(प्रथम संस्करण), “आधुनिक भारतीय शिक्षा: समस्याएँ एवं समाधान” राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी,जयपुर।
- पाठक,पी. डी.(2009),(तेईसवां संस्करण), “भारतीय शिक्षा एवं उनकी समस्याएँ” अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
- पाण्डेय, राम शकल (2010), (चतुर्थ संस्करण), “उदयीमान भारतीय समाज में शिक्षक” अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।
- शर्मा, ब्रजकिशोर, द्विवेदी मार्कन्ड व शर्मा महेन्द्र (2012), “सतत् शिक्षा”, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।
- भटनागर,ए. बी. भटनागर मीनाक्षी एवं भटनागर अनुराग (2006) (प्रथम संस्करण), “भारत में शैक्षिक प्रणाली का विकास” आर. लाल. बुक डिपो, मेरठ।
- मुखर्जी, रवीन्द्र नाथ (2006), (तेरहवाँ संस्करण), “भारतीय समाज एवं संस्कृति” विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर दिल्ली।
- लाल,रमन बिहारी (2011),(सत्रहवाँ संस्करण), शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार” रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ।
- शर्मा,आर.ए.(2011),(प्रथम संस्करण),“भारतीय शिक्षा प्रणाली का विकास” आर. लाल. बुक डिपो,मेरठ।
- शील,अवनीन्द्र (2007), “भारतीय शिक्षा का विकास एवं समस्याएँ” साहित्य रत्नालय प्रकाशन, कानपुर।